गुरुवार, 12 मई 2016

लोकमत समाचार

निष्क्रिय स्थिति नहीं है मन की शांति

गिरीश्वर मिश्र
कुलपति, महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

आज हर कोई अपने हृदय में निरंतर बढ़ते तुमुल कोलाहल के साथ जी रहा है. हर कोई खोज रहा है कि रोज के दबावों और तनावों से बेचैन मन को राहत कैसे मिले, कुछ अपने पल हों सुकून के और हम खुद अपने पास, अपने करीब आ सकें. विचारों, कामों, लोगों की बेतहाशा बढ़ती भीड़ इतनी हो रही है कि दिमाग बोझिल होता जा रहा है और हम खुद से दूर, बहुत दूर होते जा रहे हैं. मन में शांति का अहसास एक आंतरिक भाव या मनोदशा है जब व्यक्ति किसी तरह के उद्वेग और हिंसा का अनुभव नहीं करता है. वह एक सौहार्दपूर्ण, परिपूर्ण ढंग से काम करता है. उसे स्वयं से संतुष्टि मिलती है.

सच कहें तो मन में स्वस्ति भाव हो, दूसरों के कल्याण की लगन हो और सृजन की इच्छा हो तो बात बनती है. इनका सह अस्तित्व ही शांति है. मन की शांति तभी होती है जब विचार, भाव और प्रेरणा में एका या सामंजस्य मौजूद रहता है. लगभग सभी धर्मों और संस्कृतियों में शांति को मानवीय अनुभव के एक आदर्श के रूप में समझा गया है. अनेक तरह की प्रार्थनाएं और ध्यान के विधान इस हेतु किए गए हैं. वैदिक काल में समस्त सृष्टि के प्रति आदर और कल्याण के भाव वाली जीवनशैली प्रचलित रही. आज भी वैदिक कार्य शांति पाठ से समाप्त होता है जिसमें अग्नि, वायु, वनस्पति, औषधि सबकी शांति की कामना की गई है. मूढ़ आदमी अपने अस्तित्व को अज्ञानवश बाहरी वस्तुओं से जोड़ लेता है. वह अपने वास्तविक स्वरूप को भूल बैठता है. मन अज्ञानता में संतुलित नहीं रह पाता है. उसे शांति नहीं मिलती है. शांति नहीं तो चैन नहीं, सुख नहीं. चूंकि विश्रृंखलित मन जीवन को अनियंत्रित कर देता है, जरूरी है कि मनुष्य उसे नियमित करे. कहना न होगा कि व्यक्ति और समाज के स्तर पर सौमनस्य स्थापित करने के लिए, सबके फलने-फूलने के लिए, सुशोभित होने के लिए शांति आवश्यक है.

मन की शांति किसी भी तरह एक निष्क्रिय स्थिति नहीं है. यह वस्तुत: अस्तित्व की उस दशा को व्यंजित करती है जब व्यक्ति समरसता या 'हार्मनी' में होता है.

हमारी रोजमर्रा की जिंदगी में मन की शांति को सामने उपस्थित तमाम दुनियावी वस्तुओं और कल्पित वस्तुओं द्वारा निरंतर चुनौती मिलती रहती है. वे आकर्षक होती हैं और मन आसानी से उनसे जुड़ जाता है. उनके आकर्षण से मन में अव्यवस्था पैदा होती है. जो औरों के पास दिखता है उसके आधार पर सामाजिक तुलना और विकल्पों की बढ़त से मानसिक संघर्ष और असंतोष बढ़ता है. अनावश्यक और बोझिल लक्ष्य पर जोर देने से मोह, विद्वेष, घमंड और पारस्परिक ईर्ष्या ही बढ़ती है. ऐसे में मानसिक उद्वेलन शांति और आश्वस्ति के लिए बड़ा खतरा बन जाता है. सुख, पद, धन के लक्ष्य के पीछे लोग दिन-रात लगे रहते हैं. पर ऐसा करते सिर्फ अंतहीन निराशा ही हाथ लगती है. शक्ति, सुख और सत्ता ही जब अपने लक्ष्य हो जाते हैं तब मन पर बड़ा विषैला प्रभाव पड़ता है. व्यक्ति नकली और अप्रामाणिक जीवन जीने लगता है. इससे पीड़ा ही बढ़ती है. बाहरी चीजों से हमारा लगाव इतना तीव्र होता है कि हम यथार्थ की गलत छवि को ही सही मान बैठते हैं और उसी को लेकर चलने लगते हैं. इस तरह के कल्पनाजीवी यथार्थ से टकराने पर ध्वस्त हो जाते हैं. आज अवसाद और चिंताजन्य रोग जिस तरह बढ़ रहे हैं वह इसी का परिचायक है.

अस्तित्व की दशाएं बताती हैं कि बाह्य विश्व पर मनुष्य का सीमित नियंत्रण है. ये दशाएं बदलती रहती हैं और भ्रामक हैं. इसलिए मन पर विजय की बात की जाती है क्योंकि सारी कमियों के बावजूद मनुष्य में संभावना निहित है. पतंजलि अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष आदि को क्लेश मानते हैं. वे इनसे बचने के लिए योग, अभ्यास और वैराग्य का उपाय बताते हैं. योगाभ्यास से नकारात्मक भाव कम और सकारात्मक भाव अधिक आते हैं, विचारों पर नियंत्रण, सरल सादा जीवन, दूसरों की सेवा और शांति के प्रति समर्पण का भाव आता है.

मन की शांति किसी भी तरह एक निष्क्रिय स्थिति नहीं है. यह वस्तुतः अस्तित्व की उस दशा को व्यंजित करती है जब व्यक्ति समरसता या 'हार्मनी' में होता है. तब उसे यथार्थ की सही पकड़ होती है. यह व्यक्ति का अपना चुनाव होता है और वह अकुंठ भाव से रहता है. इसे अक्सर संतुष्टि, प्रसन्नता और चेतना की उच्च अवस्था के साथ जोड़ा गया है. आज मन का प्रशिक्षण देने की अनेक विधियां प्रचलित हो रही हैं. अपनी रुचि और स्वभाव के अनुसार इन्हें अपनाया जा सकता है. इन सबसे चेतना का विकास होता है और सकारात्मक गुण जैसे प्रेम, शांति, सहानुभूति, क्षमा, विनय, करुणा, अभय आदि सक्रिय होते हैं और व्यक्ति की प्रकृति के अंग हो जाते हैं. एक तरह के साक्षी भाव में व्यक्ति क्रमशः एक द्रष्टा या प्रेक्षक (आब्जर्वर) का नजरिया अपनाने लगता है और लगाव से उपजाने वाले हर्ष और शोक से बच पाता है.

अब तक जिंदगी में गहमा-गहमी और धमाचौकड़ी पर जोर था और जीवन में शांति की चर्चा हाशिए पर थी. अर्थप्रधान जीवनदृष्टि में चीजों पर कब्जा जमाने और अधिकाधिक संचय पर बल था. अब लग रहा है कि इस विचार की बड़ी सीमाएं हैं. यह खोखला विचार है और इसके सहारे हम आगे नहीं बढ़ सकते. अब जलवायु-परिवर्तन जैसे वैश्विक प्रश्नों के उठने से मनुष्य के अंतर्मन को समझना जरूरी हो चला है. अब अच्छे जीवन और टिकाऊ विकास जैसे प्रत्ययों को पुनः परिभाषित किया जा रहा है. यह भ्रम दूर हो रहा है कि खुशी प्रिय अनुभवों की एक सतत कड़ी है. वह शायद जीवन की ऐसी शैली है जिसमें दूसरे के हित, प्रेम और करुणा की खास जगह है और जीवन में घटित होने वाली सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरह की घटनाओं के बीच जीना और आगे बढ़ना संभव हो पाता है. ■■